Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 10, Issue 02, July-December, 2022
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2022

ऋग्वैदिक काल में संगीत के प्रचार एवं प्रसार में प्रशासन-तन्त्र की भूमिका: एक अवलोकन

DR. SANGEETA

Associate Professor, Dev Samaj College for Women, Ferozepur City

शोध सार

संगीत कला को ललित कलाओं में सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त है। कला की सतत् साधना हेतु कलाकार का भौतिक आवश्यकताओं से त्राण पाना नितान्त आवश्यक है, क्योंकि समुचित संरक्षण एवं प्रोत्साहन के अभाव में कलाकार की प्रतिभा का उत्कृष्ट रूप धारण करना असम्भव है। विश्लेषणात्मक दृष्टि से, कला के परिमार्जन एवं परिवर्द्धन हेतु प्रोत्साहन एवं प्रेरणा को उतना ही आवश्यक माना गया है जितना कि मानव-देह के लिए भोजन। समुचित प्रोत्साहन एवं संरक्षण के अभाव में, कलाकार मूलभूत आवश्यकताओं को जुटाने में ही संघर्षरत रहता है। परिणामस्वरूप, चिन्ता एवं अभाव से त्रस्त होकर वह कला-साधना से विरक्त हो जाता है। इतिहास पर दृष्टिपात करने से यह ज्ञात होता है कि अधिकतर संगीत-साधक अपने सुखपूर्ण जीवन-निर्वाह के लिए दरबारों एवं अमीरों के मुखापेक्षी रहे। उनमें से केवल कतिपय कलाकार ही राजकीय संरक्षण प्राप्त कर सके जबकि शेष का जीवन अभावग्रस्त ही रहा। अतः नि:संदेह यह मानना उचित है कि काल चाहे कोई भी हो, परन्तु संगीत एवं अन्य ललित कलाओं के प्रचार एवं प्रसार के दो मुख्य साधन हैं- समाज एवं प्रशासन। इसी तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए इस विषय का चयन किया गया है।

बीज शब्द: संगीत, प्रशासन, समाज, इतिहास, संस्कृति, कला।

भूमिका

समाज अपने रीति-रिवाज़ों, धार्मिक उत्सवों, सामाजिक पर्वो द्वारा कला के विकास एवं अभ्युत्थान हेतु प्रयत्नशील रहता है, जबकि कला एवं कलाकारों को जीवित रखने हेतु पर्याप्त प्रोत्साहन की आवश्यकता होती है। समाज को भी कला के विकासार्थ धनाढ्य व्यक्तियों, औद्योगिक संस्थानों एवं प्रशासन पर निर्भर रहना पड़ता है, क्योंकि इतिहास साक्षी है कि जिस कला में शासक की अपनी रूचि होती है, वह कला उन्नति एवं विकास की पराकाष्ठा को प्राप्त करती है। प्रशासन वस्तुतः मनुष्य एवं सामग्री का एक ऐसा प्रयोग एवं संगठन है, जिसके समन्वय से लक्ष्य की प्राप्ति होती है। प्रशासन का उद्देश्य दूसरों से कार्य करवाना होता है। क्षेत्र चाहे कला का हो अथवा अन्य कोई, समुचित उन्नति के लिए उसका समुचित रूप से सुव्यवस्थित होना आवश्यक है। सम्बद्ध क्षेत्र को सुव्यवस्थित एवं सुसम्बद्ध रूप प्रदान करने में प्रशासन का अहम योगदान रहता है। प्रशासन द्वारा जब भी संगीत कलाकारों को समुचित प्रोत्साहन दिया गया, उससे प्रोत्साहित होकर कलाकारों ने द्विगुणित क्षमता से संगीत के प्रचार-प्रसार में अहम भूमिका का निर्वाह किया। प्रशासनिक प्रोत्साहन प्राप्त होने के कारण समाज में भी संगीत कला को एक सम्मानित स्थान की प्राप्ति हुई।

प्रशासन: व्युत्पति, अर्थ एवं परिभाषा

प्रशासन शब्द का अर्थ है - व्यवस्था करना, व्यक्तियों की देखभाल करना अथवा कार्यो की व्यवस्था करना तथा विषयों का प्रबन्ध करना। प्रसिद्ध विद्वान, ई.एन. ग्लेडन, प्रशासन को एक ऐसा लम्बा तथा आडम्बरपूर्ण शब्द मानते है, जिसका सीधा-सादा अर्थ है-लोगों की देखभाल करना तथा विषयों का प्रबन्ध करना।

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 10, Issue 02, July-December, 2022
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2022

प्रशासन एवं संगीत का सम्बन्ध मानव-सहयोग से माना गया है। मनुष्य स्वभाव से ही सहयोगप्रिय है, इसलिए अपने जिन कार्यो में वह दूसरे व्यक्ति के साथ रहकर कार्य करता है, उसे 'प्रशासन' की संज्ञा दी जा सकती है। इस दृष्टि से प्रशासन उतना ही प्राचीन है, जितनी कि मानव-सभ्यता। इसलिए जब से मनुष्य ने साथ रहना सीखा, तब से ही प्रशासन का जन्म माना जा सकता है।

भारतीय सांस्कृतिक इतिहास में वैदिक काल प्राचीनतम है, क्योकि भारत की सांस्कृतिक उपलब्धियों का वर्णन सर्वप्रथम इसी युग में प्राप्त होता है। वेद आर्यो की प्रारम्भिक सभ्यता का एकमात्र स्रोत हैं तथा तत्कालीन राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक अवस्था पर पूर्णरूपेण प्रकाश डालते है। अतः इस काल को वैदिक काल कहा जाता है। ऋग्वेद को प्राचीनतम वेद माना गया है। इसलिए 1500-1000 ई0 पू0 की समयावधि को ऋग्वैदिक काल माना गया है। इस काल को पूर्व वैदिक काल भी कहा जाता है। सिन्धु सभ्यता का अन्त करने वाले आर्यजन थे, जिनके मूल-निवास के नियम में मतभेद पाए जाते है। परन्तु यह मानना समीचीन होगा कि आर्य सभ्यता एवं संस्कृति तत्कालीन अन्य जातियों की सभ्यता एवं संस्कृति की अपेक्षा अत्यधिक उन्नत थी एवं उनका प्रशासनिक संगठन भी उच्चस्तरीय था। उनमें राष्ट्र की शक्ति-कल्पना विराजमान थी, जिसके संगठन में कई स्तर थे।

प्रशासनिक संगठन

आर्यो के विभिन्न परिवार मूलतः राजनीतिक ईकाई थे। उनके सामाजिक जीवन का मूलाधार कुटुम्ब माना जाता था, जिसमें माता-पिता एवं बच्चे इत्यादि सम्मिलित होते थे। कुटुम्ब का मुखिया पिता होता था, जिसे गृहपति अथवा कुलपति भी कहते थे। कुछ विद्वान समाज की सबसे छोटी इकाई परिवार जिसका मुखिया पिता होता था, को 'कुलप' कहते थे। कई कुटुम्बों के समावेश से एक ग्राम का निर्माण होता था, जिसका मुखिया 'ग्रामणी कहलाता था। कई ग्रामों के समूह शासक अथवा राजा होता था। कई जनों का विवरण ऋग्वेद में मिलता है, जिनमें से प्रमुख भरत, क्रिवि पुरू, यदु, अनु मत्स्य, चेदि, गंधारी इत्यादि है। इनमें से कुछ जनों जैसे-पुरू, एवं चेदि इत्यादि का विवरण महाकाव्य काल तक उपलब्ध होता है। जन का मुखिया राजन् वीरता एवं योग्यता के आधार पर चुना जाता था । उसे राज्य में सर्वोच्च स्थान एवं सम्मान प्राप्त था।

ऋग्वेद में 'सभा एवं समिति' नामक दो महत्वपूर्ण संस्थाओं का वर्णन प्राप्त होता है। ये दोनों संस्थाएं राजा के ऊपर नियन्त्रण का कार्य करती थीं।

''सभा च मा समितिश्चावतां
प्रजापते र्दुहितरौ संविदाने
येना संगच्छा उप मा स शिक्षात्
चारू वदानि पितरः संगतषु''

- अथर्ववेद (7.12.1)

अथर्ववेद में प्राप्त यह उल्लेख दोनों समितियों की महत्ता को स्पष्ट करता है, जिसमें राजा स्वयं कहता है कि ''सभा और समिति दोनों मिलकर मेरी रक्षा करें, जो मुख्य प्रजापति की पुत्रियाँ है। सभा और समिति के जिस सदस्य से भी मै मिलूँ, वह मुझे उचित परामर्श दे। हे सदस्यो, जब तुम इन राज्य-परिषदों में मिल कर बैठो, तब मैं राष्ट्र के प्रति चारू भाषण करूँ।''

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 10, Issue 02, July-December, 2022
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2022

सभा प्रशासनिक एवं राजनीतिक कार्य करती थी। सभा-सदस्य 'सभेया' कहलाते थे जिसका अर्थ सभा में बैठने योग्य व्यक्ति माना गया। ऋग्वेद में आए उद्धरणों से यह परिपुष्ट होता है कि ''सभेया विप्राः'' से तात्पर्य उन पुरोहितों से था, जो उच्च सामाजिक मूल्यों से मुक्त, चरित्रवान् तथा विद्वता के प्रकाण्ड पण्डित थे, अतएव सभा में बैठने योग्य थे। राजा सभा की सलाह को अत्यधिक महत्व प्रदान करता था तथा उसके सदस्यों के समर्थन के अभाव में सुचारू रूप से कार्य नहीं कर पाता था। सभा का कार्य न केवल सुचारू रूप से प्रशासन चलाना था, अपितु वहाँ मनोरंजन के लिए संगीत एवं नृत्य का प्रयोग भी किया जाता था। समिति का वर्णन ऋग्वेद के परवर्ती भाग में पाया जाता है। अनुमानतः सभा समिति की पूर्ववर्ती है। ऋग्वेद काल में विदथ संस्था का भी 122 बार वर्णन किया गया है।

प्रशासन एवं संगीत

प्रशासन में राजा की सहायता के लिए पुरोहित तथा सेनानी मुख्य पदाधिकारी का कार्य करते थे, जिनमें से पुरोहित राजा को धार्मिक कार्यो में तथा यज्ञ-कर्मों के सम्पादन में सहायता करता था। संगीत की रचना प्रायः इन्हीं पुरोहित अथवा ब्राह्मणवर्ग के द्वारा होती थी, क्योंकि कला एवं साहित्य के माध्यम से समाज को सच्चरित्र एवं नैतिकतापूर्ण रूप देना ब्राह्मणवर्ग का ही कार्य था। ऋग्वैदिक काल में स्थानीय शासन की भी महत्वपूर्ण भूमिका थी। राजा स्थानीय शासन में कम हस्तक्षेप करता था। परन्तु प्रजा की उत्कर्षोवस्था के लिए वह सम्पूर्ण रूप से उत्तरदायी होता था। पुरोहित अथवा ब्राह्मण वर्ग को प्रशासन का ही एक अंग माना गया था।

ऋग्वेद काल में ग्रामों की व्यवस्था हो चुकी थी। ग्राम प्रशासन तन्त्र का ही अभिन्न अंग थे। ग्रामों की व्यवस्था के कारण, संगीत कई वर्गो में बॅट गया था। प्रत्येक वर्ग अपने संगीत को विकसित करने हेतु मिलकर अपना कार्यक्रम सार्वजनिक रूप से प्रस्तुत करता था। प्रत्येक वर्ग के संगीत का प्रदर्शन नियमबद्ध रूप से किया जाता था। इसलिए वैदिक काल के संगीत को सबसे प्राचीन, नियमित एवं सुसम्बद्ध संगीत माना गया है।

गुरूकुलों में वेद, धर्मशास्त्र, इतिहास, आध्यात्मिक शिक्षा, गणित, भूगोल इत्यादि विषयों को पढ़ाया जाता था। शिक्षा के अतिरिक्त आर्यजन द्वारा मनोरंजन की ओर भी विशेष ध्यान दिया जाता था। नृत्य, गायन, द्यूत-क्रीड़ा, आखेट इत्यादि उनके मनोरंजन के साधन थे। आर्य प्रवृति मार्गी थे। जीवन के प्रति उनमें उदासीनता नहीं थी। उनका जीवन सदा प्रसन्न तथा सुखी और रस से परिपूर्ण था। मेलों, उत्सवों में वे मनोविनोद के बहुत से साधन-प्रसाधन प्रयोग में लाते थे और इनके लिए उन्होंने सुन्दर बाजों, नृत्यों तथा गानों का निर्माण किया था, जिसमें नारी-पुरूष दोनों समान रूप से भाग लेते थे।

ऋग्वैदिक काल में प्रशासन द्वारा संगीत के उत्थान हेतु प्रत्यक्ष रूप से किये गए कार्यो का विशद् विवरण प्राप्त नही होता परन्तु वेद संहिताओं में इस प्रकार की प्रचुर सामग्री सुरक्षित है, जिससे तत्कालीन समाज की संगीत एवं नृत्यप्रियता का पता चलता है। ऋग्वेद की एक ऋचा में कहा भी गया है -

''नृत्यमानो देवताः''

(5/33/6)

ऋग्वेद समाज में गान्धर्वो एवं अप्सराओं का वर्णन उस समय की सांगीतिक उच्चावस्था का दिग्दर्शन कराता है। सामाजिक स्तर पर भी संगीत का प्रयोग विशेष रूप से किया जाता था, क्योंकि प्रत्येक परिवार में ईश्वरोपासना प्रातः एवं सायंकाल-दोनों ही समय संगीत के माध्यम से की जाती थी।

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 10, Issue 02, July-December, 2022
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2022

ऋग्वेदकालीन संगीत की अवस्था बारे में विद्वान अलकरोटार्नी का कथन द्रष्टव्य है-

ऋग्वेद काल के संगीत की बागडोर मुख्य रूप से ब्राह्मणों के हाथ में थी। ब्राह्मण ही संगीत का ज्ञान सर्वसाधारण को दिया करते थे। ब्राह्मण वर्ग ने धार्मिक अनुष्ठानों के माध्यम से संगीत को जनसामान्य में प्रचारित किया। ऋग्वेद काल में गीत, वाद्य तथा नृत्य-तीनों का पर्याप्त प्रचलन दृष्टिगोचर होता है। गीत प्रबन्धों को 'गाथा' कहा जाता था, जो एक विशिष्ट तथा परम्परागत गीत के प्रकार है। गाथाओं का गायन धार्मिक समारोह में किया जाता था, ये एक परम्परागत विशिष्ट गीत-प्रकार माना जाता था।

ऋग्वेद में गीत के पर्याय के रूप में गीर, गातु, गाथा, गायत्र, गीति तथा साम शब्दों का प्रयोग किया गया है। ऋग्वेद की ऋचाएं स्वरावलियों में निबद्ध होने पर 'स्तोत्र' कहलाती हैं। स्तोत्र मंत्रो की विशेषता उनके गान में निहित है। इस काल में गायन एवं नृत्य के साथ वाद्यों का प्रयोग भी किया जाता था।

स्त्रियां नृत्य तथा गायन में कुशल होती थी और महत्वपूर्ण उत्सवों पर बांसुरी तथा ढोलक की संगति में नृत्य कर, सबका मन प्रसन्न करती थी।

ऋग्वैदिक काल में सगीत की तीनों श्रेणियों ने पर्याप्त उन्नति कर ली थी । संगीत एवं नृत्य के विशेष आयोजन किये जाते थे, जिनमें नर्तकों के अलावा नर्तकियाँ भी भाग लेती थी। वैदिक युगीन "समन" नामक उत्सव का अपना ऐतिहासिक महत्व है। यह उत्सव रात्रि में आयोजित होता था। संगीत-नृत्य के लिए रात्रिकाल ही उपयुक्त माना जाता था, इसलिए उनका आयोजन बहुधा रात में ही किया जाता था। इस उत्सव में कुमारियाँ स्वेच्छानुसार अपने लिए वर का चुनाव करती थी । इस उत्सव में संगीत-नृत्य दक्षता की समीक्षा की जाती थी। यही समन उत्सव आगे चलकर 'समज्जा' के नाम से प्रचलित हुआ। इस तरह नृत्य-संगीत आदि कलाओं को तब राष्ट्रीय सम्मान प्राप्त था।

इस युग में मानव-जन्म के समय से लेकर, उसके अन्तिम क्षणों तक, संगीत के साहचर्य का वर्णन प्राप्त होता हैं । साम-गान के समय ऋचाओं के साथ वाद्य-वादन तथा कंठ-साधना, सप्त स्वर, चतुर्विधवाद्यों एवं ध्वनि के विशिष्ट गुणों की उत्तम तकनीकों के विकसित प्रयोग के साक्ष्य उपलब्ध होते हैं।

ऋग्वेदकालीन सांगीतिक उन्नतावस्था के लिए तत्कालीन प्रशासन के अभिन्न सहयोग को नकारा नहीं जा सकता क्योंकि कोई भी कला प्रशासन के बिना पल्लवित नहीं हो सकती ।

तत्कालीन समाज में गायन, वादन एवं नृत्य की सार्वजनिक प्रस्तुति ही जाती थी। सोमरस का पान कर, नर-नारिया सामूहिक रूप से नृत्य में भाग लेते थे। नृत्य के विभिन्न प्रकार यथा-रज्जु नृत्य, सलित नृत्य, अरूण नृत्य, प्रकृति नृत्य, पुष्प नृत्य और वसन्त नृत्य आदि से भी नृत्यकला की लोकप्रियता सिद्ध होती है।

तत्कालीन समाज में संगीत का व्यवसायीकरण नहीं था। अपितु संगीत को जीवन-निर्माण का साधन समझा जाता था। समाज में संगीत को एक सम्माननीय कला के रूप में देखा जाता था इसलिए संगीतज्ञों, गायक-वादकों एवं नर्तक-नर्तकियों को भी सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था। इस युग के संगीत की विशेषता उसके धर्म के आवरण से मुक्त होना था। नारियाँ, वेदमन्त्रों को धार्मिक अनुष्ठानों में विभिन्न शैलियों में गाती थी। सामगान के साथ स्वर-संगति तथा वीणा-संगति तत्कालीन महिलाओं की सांगीतिक कुशलता की ओर संकेत करती है, परन्तु परवर्ती काल में यह कार्य पुरूषों को सोंप दिया गया। ऋग्वैदिक काल में अपाला, विश्वास, घोषा इत्यादि कई नारियों के नामोल्लेख मिलते है, जिन्होंने

मंत्रो की रचना कर, कालान्तर में ऋषि के पद को प्राप्त किया। इन सब तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि तत्कालीन समाज में नारी को गरिमामयी एवं सम्मानजनक स्थान प्राप्त था। स्त्रियों के धार्मिक-अनुष्ठानों के साथ साथ संगीतयोजना में भी बढ़-चढ़कर हिस्सा लेने के दृष्टान्त उपलब्ध होते हैं।

यद्यपि ऋग्वैदिक काल में प्रशासन द्वारा संगीत के उत्थान हेतु किये गए कार्यो का विशद्-विवरण नहीं मिलता, तथापि यह कथन कोई अतिश्योक्ति न होगी कि कोई भी समाज अथवा कला प्रशासनिक सहयोग के अभाव में उन्नति नहीं कर सकती।

निष्कर्ष

संगीत एवं अन्य कलाओं के माध्यम से समाज को सच्चरित्र एवं नैतिकतापूर्ण रूप देने में तथा प्रशासन के अंग के रूप में धार्मिक अनुष्ठानों के माध्यम से संगीत को जनसामान्य में प्रचारित करने के लिए विशेषतया ब्राह्मणवर्ग का योगदान श्लाघनीय रहा है। राजा प्रशासनिक-तन्त्र का मुख्य आधार था, और प्रशासन से जुड़े विभिन्न पदाधिकारी राजा को प्रत्येक कार्य के लिए सहयोग प्रदान करते थे। यही कारण था कि ऋग्वैदिककालीन समाज में संगीत एवं अन्य कलाओं का प्रचुर प्रयोग किया जाता था । इतिहास पर दृष्टिपात करने से भी यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रशासनिक प्रोत्साहन के बिना कोई भी कला पल्लवित नहीं हो सकती। जिस काल में प्रशासक संगीतानुरागी था, उस काल में संगीतकला उन्नति की पराकाष्ठा पर पहुँची। परन्तु जहाँ प्रशासक संगीत विरोधी था, वहाँ संगीतकला की उन्नति का मार्ग शिथिल हो गया।

संदर्भ

राहुल सांकृत्यायन (1957) ऋग्वैदिक आर्य (ऐतिहासिक और सांस्कृतिक अध्ययन), किताब महल, इलाहाबाद, पृ0 55

वाचस्पति गैरोला (1989) भारतीय नाट्य परम्परा और अभिनयदर्पण, चैखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान दिल्ली, पृ0 115

किरण टण्डन (1988) प्राचीन भारतीय राजनीतिक विचारक, ईस्टर्न बुक लिंकर्स , दिल्ली, पृ0 13

कैलाश चन्द्र जैन (1986) प्राचीन भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और भौगोलिक अध्ययन, श्री पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृ0 88

राजकिशोर सिंह, उषा यादव (1975) प्राचीन भारतीय कला एवं संस्कृति (प्रारम्भ से गुप्त युग पर्यन्त), विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, पृ0 47

कृष्ण कुमार (1993) प्राचीन भारत का सांस्कृतिक इतिहास, श्री सरस्वती सदन, नई दिल्ली, पृ0 89

Ram Sharan Sharma (1991) Aspects of Political Ideas and Institutions in Ancient India, Oxford University Press, Delhi, Pg. 96

G.S. Ghurye (1979) Vedic India, Popular Prakshan, Bombay, Pg. 257

Radha Kumad Mookerji (1956) Ancient India, Indian Press (Publications) Private Ltd. Allahabad, Pg. 67

Bonnie C. Wade (1997) Music in India; The Classical Traditions, Manohar Publication and Distributors, New Delhi, Pg. 15